अध्याय 17

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि

प्राचीनकाल से ही कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला रही है। कृषि एवं उससे संम्बद्ध क्षेत्र भारत की अधिकांश जनसंख्या खासकर ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के लिए आजीविका का मुख्य साधन है। देश की लगभग आधी आबादी आज भी कृषि पर आश्रित है। हालांकि योजनाबद्ध विकास प्रक्रिया ने कृषि का राष्ट्रीय आय में अंश कम हुआ है फिर भी भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व कई दृष्टिकोणों से आज भी बना हुआ है।

कृषि का महत्व :– भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व और योगदान को निम्नलिखित तथ्यों के माध्यम से समझा जा सकता है –

1. राष्ट्रीय आय में योगदान :–

भारतीय कृषि हमेशा से ही राष्ट्रीय आय का एक बहुत बड़ा भाग रही है। केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा जारी किये गये आंकड़ों के अनुसार सन् 1950–51 में कृषि एवं उसकी सहायक क्रियाओं जैसे वानिकी, लकड़ी काटना, पशुपालन, मछली पालन, खनन, मुर्गी–पालन आदि का राष्ट्रीय आय में योगदान 59.2 प्रतिशत था जो सन् 2012–13 में घटकर (2004–05 के स्थिर मूल्यों पर) 13.7 प्रतिशत हो गया। फिर भी अन्य विकसित देशों के मुकाबले आज भी कृषि, जी.डी.पी. में काफी अधिक योगदान दे रही है।

2. रोजगार उपलब्ध कराना :–

भारतीय कार्यकारी जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग आज भी कृषि और उसकी सहायक क्रियाओं पर आश्रित है। 1950–51 ई. में जहा कुल कार्यकारी जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत भाग कृषि एवं उसकी सहायक क्रियाओं में कार्यरत था। वह आज भी 2011 ई., की जनगणना के अनुसार लगभग 48.9 प्रतिशत है। कृषि प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार का रोजगार प्रदान करती है। प्रत्यक्ष रूप से खेती करना, फसल कटाई, छँटाई, सिंचाई कार्य आदि में रोजगार तथा पशुपालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, वानिकी, खाद्य प्रसंस्करण, फल–सब्जियों को बिक्री हेतु तैयार करना, तेल घाणी, लकड़ी चीरना, दालें तैयार करना, पशुचारा तैयार करना, जैविक खाद तैयार करना, खली तैयार करना आदि कार्यों में अनेक गैर कृषि लोगों को अप्रत्यक्ष रुप से रोजगार प्रदान करती है।

भारत में योजना काल में कृषि का अंश रोजगार में काफी ऊँचा बना हुआ है किन्तु राष्ट्रीय आय में इसका अंश घट रहा है, जिसे कृषि की नवीन पद्धतियों को अपनाकर बढ़ाया जा सकता है।

3. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में योगदान :–

कृषि का विदेश व्यापार की दृष्टि से भी काफी महत्व है। हम कई प्रकार के कृषिगत पदार्थों का आयात एवं निर्यात करते हैं। भारत से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में चाय, गर्म मसालें, कॉफी, चावल, कपास, तम्बाकू, काजू, फल, सब्जियाँ, फूलों का रस, सामुद्रिक पदार्थ, चीनी तथा मांस और मांस से बने पदार्थ मुख्य कृषिगत वस्तुएं हैं। वर्तमान में कुल निर्यातों में कृषि तथा उसके सम्बद्ध क्षेत्र का योगदान लगभग 12.5 प्रतिशत है।

4. औद्योगिक विकास में योगदान :–

औद्योगिक विकास में कृषि का योगदान दो तरह का होता हैं–

पहला कृषि हमारे प्रमुख उद्योगों के लिए कच्चा माल उपलब्ध करवाती है। जैसे– सूती वस्त्र उद्योग के लिए कपास, पटसन उद्योग के लिए जूट, चीनी उद्योग के लिए गन्ना व चुकन्दर, बागानी उद्योगों के लिए फल, सब्जियाँ, वनस्पति तेल उद्योगों के लिए तिलहन आदि। कुछ दवाईयों के लिए भी कृषि उत्पाद काम में लिए जाते हैं और आयुर्वेदिक औषधियाँ तो अधिकांशत कृषि उत्पादों पर ही निर्भर होती है।

दूसरा उद्योगों द्वारा तैयार माल के लिए कृषि बाजार उपलब्ध करवाती है जैसे ट्रेक्टर–ट्राली उद्योग, कृषि उपकरण उद्योग, रासायनिक उर्वरक उद्योग, कीटनाशक दवाई उद्योग, बीज उद्योग, पौधशाला, आदि सभी अपनी वस्तुएं बेचने के लिए कृषि पर ही निर्भर हैं।

5. खाद्यान्न एवं चारा आपूर्ति में योगदान :–

देश में जनसंख्या एवं पशुओं के लिए खाद्यान्न एवं चारे की व्यवस्था कृषि के माध्यम से ही की जाती है।

6. निर्धनता उन्मूलन में योगदान :–

देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए रोजगार एवं आय की व्यवस्था, कृषि एवं उसकी सहायक क्रियाओं में सुधार करके सरलता से की जा सकती है और देश में निर्धनता के प्रसार को रोका जा सकता है।

7. राजस्व में योगदान :–

कृषि एवं उसकी सहायक क्रियाओं से सरकार को अल्पमात्रा में करों के रूप में राजस्व की प्राप्ति होती है।

8. अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के विकास में योगदान :–

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की नींव होने के कारण अन्य सभी क्षेत्र इससे प्रभावित रहते हैं। कृषि एवं उसकी सहायक क्रियाओं के विकास से ही ग्रामीण विकास, परिवहन, संचार, बैंकिग तथा औद्योगिक विकास को बढ़ावा मिलेगा। इन सभी कृषि योगदानों को देखते हुए कहा जा सकता है कि कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की धुरी है।

9. पशुधन के विकास का आधार :–

विश्व के सर्वाधिक पशु भारत में ही है। आज भी कृषि सम्बन्धी अधिकांश कार्य पशुओं के माध्यम से किये जाते है और अधिकांश पशुपालन कृषकों द्वारा ही किया जाता है। डेयरी, ऊन, मांस, दूध तथा दूध से बने पदार्थ का उत्पादन तथा नस्ल सुधार इत्यादि कृषि क्षेत्र में होते है। इसलिए पशुधन विकास भी कृषि क्षेत्र में होता है।

कृषि क्षेत्र की नवीन प्रवृत्तियां

औपनिवेशिक शासनकाल की नीतियों के दुष्परिणाम कृषि क्षेत्र के गतिहीन विकास के रूप में सामने आये। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय कृषि अपने दयनीय स्वरूप में थी किन्तु योजनाकाल में हुए विकासात्मक कार्यों के परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र में अनेक उल्लेखनीय सुधार हुए हैं जिन्हें निम्न प्रकार से समझा जा सकता है –

1. खाद्यान्न उत्पादन –

भारत विविधताओं का देश है। यहाँ जलवायु, भूमि, मिट्टी, जलस्तर, भौगोलिक संरचना आदि में अनेक विविधताएं पाई जाती है जिससे यहाँ कई प्रकार की फसलें बोई जाती है। मुख्य रूप से हम फसलों का वर्गीकरण दो आधार पर कर सकते है।

(क)ऋतुओं के आधार पर फसलें :–

ऋतुओं के आधार पर फसले तीन प्रकार की होती है।

(i) रबी की फसल :–

ये फसलें अक्टूबर से नवम्बर के मध्य बोई जाती है तथा मार्च–अप्रेल के बीच काटी जाती है। इनमें मुख्यतः गेहूँ, जौ, चना, सरसों, आदि फसलें आती है।

(ii) खरीफ की फसल :–

ये फसलें जून–जुलाई के मध्य बोई जाती है तथा सितम्बर से अक्टूबर के मध्य काटी जाती है। इसके अन्तर्गत चावल, ज्वार, बाजरा, अरहर, मूंग, मक्का, कपास, तिल, गन्ना, सोयाबीन तथा मूँगफली की फसलें आती है। चावल एक ऐसी फसल है जो रबी तथा खरीफ दोनों के अन्तर्गत आती है।

(iii) जायद फसलें :–

ये फसलें मार्च से जून के मध्य होती है जैसे– खरबूजा, तरबूज, ककड़ी तथा सब्जियां, सूरजमुखी आदि फसलें आती है।

(ख) उपयोग के आधार पर फसलों का वर्गीकरण :–

उपयोग के आधार पर फसलों को दो भागों में बाँटा जाता है :–

(I) खाघान्न फसलें :–

खाद्यान्न फसलें वे फसलें होती है जो खाद्य पदार्थों के रूप में उपयोग में ली जाती है। ये निम्न है :– चावल, गेहूँ, मक्का, मोटे अनाज तथा दालें।

(ii) व्यापारिक फसलें या नकदी फसलें :–

नकदी फसलें वे फसलें हैं जो लाभ कमाने के लिए विक्रय के उद्देश्य से ही उगायी जाती है। किसान इन्हें या तो सम्पूर्ण रूप से बेच देता है या आंशिक रूप से उपयोग करता है। शेष बड़ा हिस्सा बेच देता है। जैसे– तिलहन, गन्ना, जूट, कपास, चाय, कॉफी, तम्बाकू।

वर्तमान में सभी फसलों के क्षेत्रफल और उनकी उत्पादकता में परिवर्तन हुआ है।

विगत वर्षों में खाद्यान्नों के उत्पादन में सन् 1950–51 से 2012–13 तक के 62 वर्षों में 4.2 गुना, तिलहनों में लगभग 5.3 गुना, गन्ने में लगभग 5.13 गुना, कपास में लगभग 3.95 गुना वृद्धि हुई तथा जूट में लगभग 2.5 रही है।

स्त्रोत– सांख्यिकी एवं आर्थिक निदेशालय 2015

(2) प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उत्पादन की प्रवृत्तियां–

भारत में विश्व के अन्य कई देशों के मुकाबले आज भी उत्पादकता कम है जिसके प्रमुख कारण निम्न हैः–

(क) प्राकृतिक कारक– इस के अन्तर्गत निम्न कारणों को शामिल किया जाता हैः–

(i) मानसून पर अत्यधिक निर्भरता
(ii) सिंचाई के साधनों का अभाव
(iii) निरन्तर कृषि कार्य से उर्वरा शक्ति का ह्रास
(iv) पश्चिमी क्षेत्र का विशाल रेगिस्तान
(v) खरपतवार की समस्या
(vi) प्राकृतिक आपदाएँ (अकाल, बाढ़, सूखा, चक्रवात)
(vii) बंजर एवं बेकार भूमि का बड़ा भाग

(ख) तकनीकी कारण–

(i) सिंचाई सुविधाओं का अविकसित एवं पिछड़ा हुआ होना
(ii) विद्युत आपूर्ति की कमी
(iii) कृषि उत्पादक जैसे– उन्नत खाद, बीज, औजार आदि का अभाव
(iv) परिवहन संचार तथा बैकिंग सुविधाओं का अभाव
(v) कृषि उत्पादन के भण्डारण की उच्च लागत
(vi) कृषि विपणन की उचित व्यवस्था का न होना

(ग) संस्थागत कारण–

(i) भू– जोतों का आकार छोटा होना
(ii) दोषपूर्ण भू–धारण प्रणाली
(iii) जनसंख्या की कृषि पर अत्यधिक निर्भरता।
(iv) कृषक के जोतों का दूर–दूर बिखरा होना।

उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त प्राकृतिक आपदाएं तथा वित्तीय संकट भी कृषि उत्पादकता के कम होने का मुख्य कारण है।

(3) भूमि सुधार कार्यक्रम :–

कृषिगत उत्पादन एवं उत्पादकता को बढ़ाने तथा किसानों की आर्थिक दशा को सुधारने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भूमि सुधार कार्यक्रमों पर बल दिया गया जिसके अन्तर्गत मुख्य कदम जमींदारी उन्मूलन था। इसके अतिरिक्त निम्न भू–सुधार कार्यों का क्रियान्वयन भी किया गयाः–

(I) मध्यस्थों की समाप्ति
(ii) लगान नियमन
(iii) भू–धारण की सुरक्षा
(iv) काश्तकारों को भू–स्वामी बनने का अधिकार दिलाना
(v) जोतों की सीमा का निर्धारण
(vi) चकबन्दी
(vii) सहकारी खेती
(viii) भूमिहीन मजदूरों को भूमि वितरण
(ix) अनुसूचित जाति तथा जनजाति के काश्तकारों की भूमि को अन्य जातियों के हस्तातंरण पर रोक।
(x) भू–रिकॉर्ड के कम्प्यूटरीकरण की सुविधा।

स्वतंत्रता प्राप्ति से अब तक अनेक सुधार कार्यक्रम अपनाये गए है किन्तु आज भी किसानों को अशिक्षा एवं अज्ञानता के

कारण उसका पूरा लाभ उन्हें नहीं मिल पा रहा है।

(4) सिंचाई:– भारतीय कृषि ''मानसून का जुआ'' कहलाती है। वर्षा पर निर्भर रहने के कारण कृषि में सदैव अनिश्तिता तथा अस्थिरता बनी रहती है जिसे ध्यान में रखकर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही सिचाईं सुविधाओं के विस्तार पर विशेष ध्यान दिया गया है। भारत में सिंचाई के प्रमुख स्रोत नहर, कुएं, चड़स व तालाब आदि है।

भारत सरकार द्वारा योजनाकाल में सिंचाई सुविधाओं के लिए विभिन्न परियोजनाओं का क्रियान्वन किया गया है। सिंचाई परियोजनाओं को तीन भागों में बाँटा गया है–

(I) लघु सिंचाई परियोजनाएं – ये 2000 हैक्टेयर तक कृषि योग्य कमाण्ड क्षेत्र वाली परियोजनाएं होती है।

(ii) मध्यम सिंचाई परियोजनाएं – ये 2,000 हैक्टेयर से अधिक किन्तु 10,000 हैक्टेयर तक कृषि योग्य कमाण्ड क्षेत्र वाली परियोजनाएं है।

(iii) वृहत् सिंचाई परियोजनाएं – ये 10,000 हैक्टेयर से अधिक कृषि योग्य कमाण्ड क्षेत्र वाली परियोजनाएं होती है।

(5) कृषि जोतों का पुनर्गठन:–

भारत में जोतों का आकार छोटा है। साथ ही जोते दूर–दूर तथा बिखरी हुई है। इसका मुख्य कारण उत्तराधिकारी नियम के अनुसार पैतृक भूमि का बंटवारा है जिसे 'उप विभाजन' कहा जाता है। इससे खेतों का आकार छोटा होता जाता है। दूसरा प्रत्येक किसान के अधीन आने वाली जोते एक स्थान पर न होकर दूर–दूर बिखरी हुई है, जिसे 'अपखण्डन' कहा जाता है क्योंकि प्रत्येक उत्तराधिकारी भूमि की प्रत्येक किस्म में से हिस्सा प्राप्त करता है।

भारत में प्रथम कृषिगत संगणना के अनुसार – सन् 1970–71 में कृषि जोत का आकार 2.28 हैक्टेयर था जो 2000–01 में घटकर 1.33 हो गया है। कृषि में सर्वाधिक भाग 62.88 प्रतिशत सीमान्त जोते हैं। कृषि जोतों को आकार के आधार पर पांच भागों में बांटा गया है:–

i. सीमान्त जोत – 1 हैक्टेयर से कम
ii. लघु जोत – 1 से 2 हैक्टेयर
iii. अर्द्ध मध्यम जोत – 2 से 4 हैक्टेयर
iv. मध्यम जोत – 4 से 10 हैक्टेयर
v. दीर्घ जोत – 10 व उससे अधिक हैक्टेयर

भारत में छोटी तथा सीमान्त जोतों की संख्या अधिक है जोतों के आकार को छोटा होने से रोकने के लिए निम्न उपाय अपनाये जा रहे हैं–

(I) चकबन्दी
(ii) सहकारी खेती

(6) खाद, उर्वरक एवं कीटनाशक दवाईयां:–

कृषि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए खाद और उर्वरकों का अपना एक अलग ही महत्व है। भारतीय कृषक प्रारम्भ से ही पशुओं के गोबर, फसलों की पत्तियों और जीवों द्वारा निर्मित खाद और उर्वरकों का उपयोग भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए करते आ रहे हैं, किन्तु हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग तीव्रगति से बढ़ा है। रसायनिक उर्वरकों में मुख्य रूप से नाइट्रोजन, फॉस्फेट, और पोटाष का उपयोग अधिक मात्रा में होता है। वर्तमान में भारत में उर्वरकों के उपयोग का स्तर 239.59 लाख मी. टन हो गया है।

किन्तु आज भी उर्वरकों के उपयोग में भारत विकसित देशों के मुकाबले नीचे स्तर पर है। यही नहीं, भारत के विभिन्न प्रदेशों में उर्वरकों के उपयोग में भी भारी अन्तर पाया जाता है। पंजाब में उर्वरकों का प्रति हेक्टयर उपयोग सर्वाधिक है, वहीं उड़ीसा में यह सबसे कम है।

रासायनिक उर्वरकों का अधिकांश उपयोग धान, गेहूँ, गन्ना, संकर कपास तथा व्यापारिक फसलों में किया जाता है। इसी प्रकार फसलों को मौसमी बीमारियों और कीटाणुओं से बचाने के लिए कीटनाशक दवाइयों का उपयोग किया जाता है। मूंगफली, कपास, धान व गन्ने की फसलों को कीटाणुओं व बीमारियों से सर्वाधिक हानि होती है। साथ ही, फल व सब्जियों में कीटों का खतरा सदैव बना रहता है। इनसे बचाव के लिए कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग कारगर सिद्ध हुआ है। उर्वरकों का प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है किन्तु आजकल जैविक खेती के लाभों को देखते हुए उसके क्षेत्र में भी बढ़ोतरी होने लगी है।

(7) उन्नत बीजों का उपयोग:–

कृषि उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करने के

लिए उन्नत बीजों का प्रयोग अतिआवश्यक है। उन्नत बीजों के प्रयोग से उत्पादन में 10 से 20% की वृद्धि हो सकती है। भारत सरकार ने विभिन्न फसलों के प्रमाणित बीजों के उत्पादन एवं वितरण को प्रोत्साहन देने के लिए सन् 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम और 1969 में भारतीय राज्य फार्म निगम की स्थापना की। किसानों के लिए उन्नत बीजों की व्यवस्था करने के लिए 13 राज्य बीज निगम भी स्थापित किये गये हैं। भारतीय बीज कार्यक्रम में तीन बीज उत्पादनों यथा, प्रजनक, आधारी तथा प्रमाणित बीजों को स्वीकार किया जाता है। उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है।

(8) कृषि यन्त्रीकरणः–

भारतीय किसानों द्वारा खेती हेतु इस्तेमाल किये जाने वाले औजार एवं उपकरण सामान्यतः पुराने और तकनीकी विहीन है। योजना काल में कृषि में हुए विकास के परिणामस्वरूप कृषि में नये–नये उपकरणों का उपयोग होने लगा है, जैसे– ट्रेक्टर, हार्वेस्टर, पावर टिलर, थ्रेसर, पम्पसेट आदि।

कृषि में यन्त्रों के उपयोग से न केवल कृषि कार्य आसान हुआ बल्कि कृषि उत्पादकता में भी वृद्धि हुई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय तक ट्रेक्टरों का उत्पादन नहीं होता था, किन्तु आज देश इनके उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया है। विद्युत पम्प सेटों एवं डीजल पम्प सेटों का उत्पादन भी किया जा रहा है। कृषि यन्त्रीकरण में सर्वाधिक प्रगति पंजाब व हरियाणा राज्यों ने की है। कृषि में यन्त्रीकरण एक ओर जहाँ उत्पादकता को बढ़ाता है वहीं दूसरी ओर कृषि परिवहन, फसल कटाई, छँटाई, भूमि की खुदाई, आदि सभी कार्यों को सरल बनाता है तो यंत्रीकृत कृषि भूमिहीन श्रमिकों की बेरोजगारी का कारण भी बनता है। यंत्रीकरण छोटे व बड़े किसानों के बीच असमानता को बढ़ाता है और पर्यावरण प्रदूषण का कारण भी बनता है। इन सब गुण–दोषों के बावजूद भारत जैसे विकासशील देश में बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान्न आपूर्ति बढ़ाने के लिए कृषि में यन्त्रीकरण अतिमहत्वपूर्ण है, लेकिन यन्त्रीकरण नियन्त्रित और सुदृढ़ होना चाहिए।

(9) कृषि उपजों का न्यूनतम समर्थन मूल्यः–

किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलाने और कृषि कार्य को प्रोत्साहन देने के लिए भारत सरकार द्वारा विभिन्न फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा की जाती है जो वर्ष में दो बार रबी और खरीब के मौसम में की जाती है। इसके लिए सरकार ने 1965 में कृषि मूल्य आयोग की स्थापना की जिसे बाद मे कृषि लागत एवं मूल्य आयोग के नाम से जाना जाने लगा। न्यूनतम समर्थन मूल्य वे मूल्य होते हैं जिस पर सरकार किसानों द्वारा बेची जाने वाली पूरी फसल खरीदने को तैयार रहती है। दूसरे शब्दों में समर्थन मूल्य वह न्यूनतम मूल्य है जो किसानों को अपनी फसल के लिए आवश्यक रूप से प्राप्त होगा। इसकी घोषणा सरकार फसल बोने से पहले ही करती है। जिन फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित किया जाता है, वह निम्न हैः–

(I) **7 प्रकार के अनाजः**– धान, गेहूँ ज्वार, बाजरा, मक्का, रागी व जौ।

(ii) **दालेंः**– चना, अरहर, मूंग, उड़द, मसूर।

(iii) **तिलहनः**– सोयाबीन, सरसों, सूरजमुखी, मूंगफली, कुसुम्भ, तोरिया, कोपरा, तिल, रामतिल।

(iv) **अन्य फसलेंः**– गन्ना, कपास, पटसन, नारियल।

समर्थन मूल्य का उद्देश्य किसानों के हितों की रक्षा करना होता है। यदि बाजार मूल्य गिर जाता है तो किसान अपनी सम्पूर्ण फसल सरकार को बेचकर हानि से बच सकता है। इनकी घोषणा से किसानों की मूल्य सम्बन्धित आशंका दूर होती है और वे उत्पादन सम्बन्धि सही निर्णय ले पाते है।

दूसरी तरफ सरकार को भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सुचारु रूप से चलाने के लिए अनाज तथा अन्य कृषिगत वस्तुएं न्यूनतम मूल्य पर खरीदने का अवसर मिल जाता है जिससे सरकार अपने पास बफर स्टॉक का निर्माण कर लेती है और कीमतें बढ़ने की स्थिति में उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा हेतु इस स्टॉक से अनाज आदि बेचना प्रारम्भ कर देती है जिससे कीमतों पर नियन्त्रण स्थापित किया जा सकता है।

(10) कृषि ऋणः–

भारत में कृषिगत अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन का एक कारण ऋण की सुविधाओं का अभाव माना जा सकता है। किसानों को खाद, बीज, उर्वरक, कीटनाशक, कृषि यन्त्र, मजदूरी आदि सभी कार्यों के लिए पर्याप्त मात्रा में ऋण की

आवश्यकता पड़ती है। कृषकों को अवधि के आधार पर तीन प्रकार के ऋणों की आवश्यकता पड़ती है:–

(i) अल्पकालीन ऋणः–

ये ऋण 15 महीनें से कम की अवधि के लिए दिये जाते है जो कृषक कृषि सम्बन्धी अल्पकालीन आवश्यकताएं जैसे–बीज, खाद, चारा आदि खरीदने तथा घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये होते हैं।

(ii) मध्यम कालीन ऋणः–

ये ऋण 15 महीने से अधिक किन्तु 5 वर्ष से कम की अवधि के लिए दिये जाते हैं। ये सामान्यतया खेत में सुधार करने, पशु खरीदने, कुआँ खुदवाने, कृषि औजार खरीदने के लिए होते हैं।

(iii) दीर्घकालीन ऋणः–

ये 5 वर्ष से अधिक अवधि के लिए दिये जाते हैं। ये सामान्यतया नई भूमि खरीदने, पुराने कर्जों को चुकाने लघु सिंचाई, बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने, भारी मशीनरी खरीदने विद्युतिकरण, ट्यूबवैल खुदवाने आदि के लिए दिए जाते हैं।

इन सभी ऋणों की प्राप्ति कृषकों द्वारा दो प्रकार के स्रोतों से की जाती हैं जो निम्न प्रकार से है–

(अ) गैर संस्थागत स्रोतः–

इसके अन्तर्गत स्थानीय ग्रामीण साहूकार, जमींदार, महाजन, कमीशन एजेंट, व्यापारी, बड़े भूस्वामी व पारिवारिक रिश्तेदार शामिल होते हैं।

(ब) संस्थागत स्रोतः–

राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण साख सुविधाओं के विस्तार हेतु 12 जुलाई, 1982 को कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए बैंक 'नाबार्ड' की स्थापना की गयी। यह ग्रामीण ऋण व्यवस्था की सबसे शीर्ष संस्था है। संस्थागत ऋण के प्रमुख स्रोतों में व्यापारिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक, भूमि विकास बैंक आदि शामिल है।

अल्पकालीन ऋण तथा मध्यमकालीन ऋण प्रायः सहकारी समितियों द्वारा प्रदान किये जाते हैं जबकि दीर्घकालीन ऋण भूमि विकास बैंक जिसे 'भूमि बन्धक बैंक' भी कहा जाता है के द्वारा प्रदान किए जाते है। ऋण के क्षेत्र में संस्थागत स्रोतों के आगमन से कृषकों को संस्थागत स्रोतों द्वारा किए गए शोषण से मुक्ति मिली है तथा 'ब्याज' भी कम चुकाना पड़ता है।

(11) किसान क्रेडिट कार्ड योजनाः–

किसानों को अल्पकालीन ऋण उपलब्ध करवाने के लिए 1998–99 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना शुरु की गयी जिसके अन्तर्गत ऐसे किसान जो 5,000 रु. या अधिक मूल्य के उत्पादन ऋण के लिए पात्र होते है, वे किसान क्रेडिट कार्ड के हकदार होंगे। इसके अन्तर्गत किसानों को क्रेडिट कार्ड तथा पास बुक दी जाती है। यह कार्ड तीन वर्ष के लिए वैद्य होता है तथा निर्धारित सीमा के अन्तर्गत निकाली गई राशि का भुगतान 12 माह के भीतर करना होगा। अच्छे निष्पादन की स्थिति में ऋण की सीमा को बढ़ाया भी जा सकता है। किसान क्रेडिट कार्ड की सीमा का निर्धारण जोत के आकार, फसल पैटर्न तथा वित्त के आकार के आधार पर किया जाता है।

सन् 2001–02 के पश्चात् किसान क्रेडिट कार्ड के धारकों को दुर्घटना से मृत्यु पर 50,000 रुपये तथा स्थाई विकलांगता पर 25,000 रुपये की बीमा सुरक्षा की व्यवस्था भी की गई है। वर्तमान में 3,00,000 रुपये तक के ऋण पर कोई प्रक्रिया शुल्क भी वसूल नहीं किया जाता है।

किसान क्रेडिट कार्ड व्यापारिक बैंकों, सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के द्वारा जारी दिये जाते हैं। सर्वाधिक किसान क्रेडिट कार्ड व्यापारिक बैंकों द्वारा जारी किये गये हैं।

जून, 2012 तक 11.39 करोड़ किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये जा चुके है।

इस प्रकार किसान क्रेडिट कार्ड योजना किसानों के ऋण सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने में एक महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

(12) कृषि बीमाः–

भारतीय कृषि सदैव प्राकृतिक प्रकोपों जैसे–अतिवृष्टि, अनावृष्टि, ओलावृष्टि, पाला, टिड्डियों का प्रकोप, बीमारियां आदि से प्रभावित रहती है। इन प्रकोपों के कारण किसान सदैव आशंका से घिरा रहता है। किसानों की इनसे होने वाली हानियों से एक सीमा तक रक्षा करने के लिए सरकार द्वारा विभिन्न बीमा कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया गया है।

इसके अन्तर्गत सन्1999–2000 में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना शुरु की गयी जिसमें फसल वाले मौसम में प्राकृतिक आपदाओं, कीटों तथा बीमारियों से फसलों को होने वाले नुकसान की भरपाई के लिए किसानों को वित्तीय सहायता दी जाती है। इसमें भू–जोत के आकार को ध्यान में रखे बिना ऋणी व गैर ऋणी सभी किसानों को सहायता दी जाती है। यह देश के 25 राज्यों तथा 2 केन्द्र शासित प्रदेशों में संचालित है। कृषि बीमा योजना किसानों के लिए एक लाभप्रद योजना है जो उन्हें जोखिम से बचाती है किन्तु अभी भी इसके विस्तार की आवश्यकता है क्योंकि सभी किसानों को इन योजनाओं का लाभ नहीं मिल पा रहा है।

कृषि की समस्याएं

भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की अधिकांश जनसंख्या के रोजगार तथा आय का मुख्य स्रोत कृषि है। देश की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार स्तम्भ है। इसके बावजूद यहां कृषि की दशा सन्तोषजनक नहीं है। आज कृषि क्षेत्र में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जिनका विवरण निम्न प्रकार से है:–

(i) प्राकृतिक विपदाएं :–

भारतीय कृषि मानसून का जुआ है। यहां वर्षा की अनियमितता तथा अनिश्चितता सदैव बनी रहती है। कृषि को सूखा, बाढ़, पाला, चक्रवात, तेज आंधियों का सदैव भय बना रहता है। इसके अतिरिक्त मृदा अपरदन, मरूस्थल प्रसार, भूमि की उर्वरता की क्षति, सेम की समस्या, क्षारीयता, कीड़ों का प्रकोप, बीमारियों आदि से भी कृषि क्षेत्र में भारी हानि होती है।

प्राकृतिक विपदाएं : सूखा

(ii) जोतों कों छोटा आकार :–

भारतीय कृषि में पिछड़ेपन का मुख्य कारण जोतों का छोटा आकार है। इस कारण इन पर उन्नत कृषि तकनीक का प्रयोग कर पाना संभव नहीं है। दूसरा जोतें बिखरी हुई होने के कारण उसका बहुत बड़ा भाग मेड़बन्दी में चला जाता है और प्रत्येक जोत पर कृषक उचित ध्यान व तकनीक उपयोग में नहीं ला पाता है जिससे उत्पादकता में कमी आती है।

(iii) कृषि वित्त का अभाव :–

फसल बोने से लेकर काटकर बाजार में बेचने तक किसानों को कृषि कार्य तथा जीवन–निर्वाह हेतु वित्त की अत्यन्त आवश्यकता होती है। खाद, बीज, कीटनाशक, उपकरण, बिजली का बिल, मजदूरी आदि का भुगतान करने के लिए किसानों को स्थानीय साहूकारों, महाजनों तथा व्यापारियों से उधार लेना पड़ता है जो उनसे ऊँची ब्याज दरें वसूल करते है तथा किसानों को अपनी उपज जबरन उन्हें ही बेचने को बाध्य करते है तथा उपज का उचित मूल्य भी नहीं देते है। इसलिए कृषक सदैव अभाव में ही जीवन यापन करता है। इससे कृषि उत्पादकता प्रभावित होती है।

(iv) कृषि आगतों का अभाव:–

किसानों के पास उन्नत बीज, खाद, कीटनाशक, अच्छे औजार आदि की अपर्याप्तता एवं अभाव बना रहता है। अच्छे बीजों एवं तकनीक के अभाव में उत्पादन कम हो पाता है। खाद तथा कीटनाशकों के अभाव में फसल खराब हो जाती है।

(v) सिंचाई सुविधाओं का अभाव:–

भारतीय कृषि सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर है क्योंकि यहाँ कृत्रिम सिंचाई सुविधाओं का अभाव है तथा जो उपलब्ध हैं उनमें भी भारी क्षेत्रीय असन्तुलन पाया जाता है। तालाबों, बावड़ियों, पोखरों, जोहड़ों आदि का अनियोजित विदोहन तथा रखरखाव के अभाव के कारण धीरे–धीरे अनुपयोगी होते चले गये। उनकी जगह ट्यूबवैल व नलकूपों के अत्यधिक उपयोग के कारण भूजल स्तर बहुत नीचे चला गया है। सिंचाई के अभाव में यदि वर्षा समय पर नहीं हो पाती है तो फसलों को भारी हानि होती है।

(vi) भूमि की उर्वरा शक्ति का ह्रासः–

रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते प्रयोग के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति लगातार कम होती जा रही है जिससे उत्पादकता में गिरावट आती है।

(vii) कृषि विपणन की समस्याः–

भारतीय किसान की एक महत्वपूर्ण समस्या यह है कि उसे अपनी फसल बेचने के लिए जिन मण्डियों तक जाना पड़ता है वे काफी दूर होती है। यातायात की उचित व्यवस्था नहीं होने के कारण वहां तक पहुंचना कठिन होता है। इन मण्डियों में भण्डारण की उचित व्यवस्था न होने के कारण वर्षा, कीड़े, चूहों आदि के कारण किसानों की फसलें खराब हो जाती है। कभी–कभी उन्हें अपनी उपज मजबूरीवश गांव में ही साहूकारों या बिचोलियों को कम मूल्य पर भी बेचना पड़ता है।

(viii) किसानों की रूढ़िवादिताः–

आज भी अधिकांश भारतीय किसान रूढ़िवादी परम्पराओं में जकड़े हुए हैं। वे कृषि कार्यों में व्यय की तुलना में शादी, मृत्युभोज एवं अन्य सामाजिक परम्पराओं के निर्वाह करने में व्यय अधिक करते हैं। इन कार्यों के लिए वे कर्ज भी लेते हैं। वहीं दूसरी ओर भाग्यवादिता के कारण अपनी गरीबी को किस्मत का लेख मानकर उससे बाहर निकलने का प्रयास नहीं करते हैं।

(ix) किसानों में अशिक्षा :–

आज भी भारत में किसानों में अशिक्षा अधिक पाई जाती है जिससे वे न तो कृषि की उन्नत एवं उचित तकनीक को समझ पाते है और न ही प्रयोग में ले पाते हैं। इसी अशिक्षा के कारण उचित मूल्य पर अपनी उपज बेचने के प्रयास कर पाते है।

(x) भू–सुधार कार्यक्रमों का उचित क्रियान्वन नहीं होनाः–

जमींदारी व जागीरदारी प्रथा तथा बिचोलियों का अन्त तथा कृषकों को भूस्वामित्व दिलाने के लिए चलाये गये भू–सुधार कार्यक्रमों का पूरा लाभ किसानों को नहीं मिल पाया है। कानून की सीमाओं का लाभ उठाकर आज भी बड़े किसानों तथा ज़मीदारों ने भूमिहीन किसानों को भूस्वामित्व नहीं दिया है। वे सिर्फ खेतीहर श्रमिक बनकर रह गये हैं।

(xi) उचित मूल्य की समस्याः–

किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। व्यापारियों द्वारा किसानों से उपज कम से कम मूल्य पर खरीदी जाती है। कई बार तो फसल का मूल्य इतना कम रहता है कि किसानों की लागत भी नहीं निकल पाती है। सरकार द्वारा कुछ फसलों के समर्थन मूल्य जारी किए गए है, किन्तु वे भी अपर्याप्त है।

कृषि समस्याओं के निराकरण के उपाय

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि क्षेत्र में विकास के लिए अनेक प्रयास किये गए हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना की तो प्राथमिकता ही कृषि थी। इसके बाद भी सभी योजनाओं में कृषि विकास पर विशेष जोर दिया गया है किन्तु फिर भी भारतीय कृषि अनेक समस्याओं से ग्रसित है जिसके सुधार हेतु निम्न सुझाव दिए जा सकते हैंः–

(i) भू सुधारों को प्रभाव पूर्ण ढ़ंग से लागू करना :–

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भू सुधार हेतु किए गए प्रयास चकबन्दी, सहकारी खेती, काश्तकारी सुधार, भू–स्वामित्व निर्धारण आदि का प्रभावी क्रियान्वन करवाने हेतु उचित कदम उठाए जायें। इसके कड़े कानून तथा नीतियों को लागू किया जाये।

(ii) सीमान्त किसानों तथा खेतीहर श्रमिकों को कृषि आगते उपलब्ध करवानाः–

सम्पन्न तथा बड़े किसान कृषि सम्बन्धी सभी आगते उन्नत खाद, बीज, कीटनाशक, उर्वरक, यन्त्र आदि सभी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं किन्तु छोटे व सीमान्त किसानों के लिए इन्हें प्राप्त करना कठिन होता है। अतः सरकार को इन किसानों को उचित मूल्य पर तथा अनुदानित आगते उपलब्ध करवानी चाहिए, साथ ही इन आगतों के उपयोग किये जाने हेतु उन्हें प्रशिक्षित भी करना चाहिए।

(iii) शुष्क खेती की विधियों का प्रसार :–

कम वर्षा तथा सिंचाई सुविधाओं से वंचित क्षेत्रों में कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए शुष्क खेती की विधियों को अपनाने के लिए किसानों को प्रेरित किया जाना चाहिए, साथ ही ऐसी तकनीकी के लिए प्रशिक्षित किया जाये जिससे वे कम पानी से अधिक उत्पादन कर सके। जैसे–बूंद–बूंद सिंचाई, फव्वारा सिस्टम आदि।

(iv) शिक्षा का प्रसारः–

किसानों में शिक्षा का प्रसार किया जाना चाहिए जिससे वे कृषि की नवीन तकनीकों को समझने एवं प्रयोग करने में सक्षम बन सके।

(v) ग्रामीण कुटीर उद्योगो को बढ़ावा दिया जायेः–

कृषि पर जनसंख्या के भार को कम करने के लिए गांवों में कुटीर उद्योगों एवं कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया जाये जिससे ग्रामीण जनता के आय के स्रोत भी बढ़ेंगे और कृषि पर जनसंख्या का भार भी कम होगा।

(vi) कृषि के साथ–साथ वैकल्पिक रोजगार को बढ़ावा :–

किसानों को केवल कृषि पर निर्भर रहने की बजाय कृषि के साथ रोजगार के वैकल्पिक साधनों का उपयोग भी करना चाहिए जैसे– मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, दुधारू पशुपालन, खेतों के किनारे–किनारे फलों के वृक्ष रोपित करना आदि। इन कार्यों से एक और तो किसानों की आय बढ़ेगी, दूसरी तरफ किसी समय फसल की हानि होने पर भी उन्हें कर्ज की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इससे किसानों की दशा सुधरेगी और कृषि उत्पादकता भी बढ़ेगा।

(vii) कृषि भण्डारगृहों की स्थापनाः–

किसानों की उपज को सुरक्षित रखने के लिए यथोचित स्थान पर कृषि भण्डार गृहों की स्थापना की जाये।

(viii) जैविक खेती को बढ़ावा :–

भूमि की क्षीण होती उर्वरा शक्ति का मुख्य कारण रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों का अत्यधिक प्रयोग है। इससे बचाव के लिए जैविक खेती एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यह एक ओर तो उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है तो दूसरी ओर स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के लिए भी लाभप्रद है।

हरित क्रान्ति एवं श्वेत क्रान्ति

हरित क्रान्ति :–

तीसरी पंचवर्षीय योजना के शुरू से चौथी योजना के बीच (1961–69) के 8 वर्ष भारतीय कृषि के इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण वर्ष रहे हैं। यह वह अवधि थी जिसमें कृषि की नयी रणनीति प्रयोग में आई। पायलट प्रोजेक्ट के रूप में 7 जिलों में गहन कृषि जिला कार्यक्रम शुरू किया गया। इसके बाद अधिक उपजाऊ किस्म के बीज प्रोग्राम को भी जोड़ दिया गया और इस विकास रणनीति को पूरे देश भर में विस्तार करने का लक्ष्य तय किया गया। यही रणनीति हरित क्रान्ति की शुरूआत थी।

हरित क्रान्ति का एक दृश्य

कृषि के परम्परागत तरीकों के स्थान पर नई तकनीक जिसमें रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशक दवाइयों, उन्नत बीजों, आधुनिक कृषि उपकरण, विस्तृत सिंचाई परियोजनाओं आदि के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए 1966–67 में खरीफ की फसल के साथ ही एक नए युग की शुरूआत हुई जिसे ''हरित क्रान्ति'' का नाम दिया गया। इसके जन्मदाता प्रो. ई. नोर्मन बॉरलोक है। लेकिन भारत में प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन को हरित क्रान्ति का जनक माना जाता है। इस क्रान्ति का मुख्य उद्देश्य देश को खाद्यान्न संकट से बाहर निकाल कर कृषि उत्पादन में कम समय में विशेष वृद्धि करके उसे दीर्घकाल तक बनाए रखना तथा कृषि में व्यवसायिक दृष्टिकोण को अपनाना था।

हरित क्रान्ति के प्रमुख तत्व :–

(I) अधिक उपज देने वाली फसलों का कार्यक्रम – यह कार्यक्रम 1970–71 में 6 फसलों पर लागू किया गया जिसमें धान, गैहूं, मक्का, ज्वार, बाजरा व रागी आते हैं। गैहूं की मैक्सिन किस्में, चावल की चीनी व कुछ भारतीय विकसित किस्में तथा मक्का, ज्वार, बाजरा व रागी में देश में ही विकसित किस्में प्रयोग में ली गयी। इस कार्यक्रम में उन्नत किस्मों के साथ–साथ कीटनाशक दवाइयों तथा रासायनिक उर्वरकों का भी प्रयोग किया गया जिससे पैदावार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई।

इस कार्यक्रम में सर्वाधिक सफलता गैहूँ के क्षेत्र में प्राप्त हुई। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, केरल, तमिलनाडु, पं. बंगाल में यह कार्यक्रम काफी सफल रहा।

(ii) बहु–फसल कार्यक्रम :–

बहु–फसल कार्यक्रम के अन्तर्गत थोड़े समय में पक कर तैयार हो जाने वाली किस्में बोई जाती है जिससे एक वर्ष में एक ही भूमि पर एक से अधिक बार एक साथ कई फसलें बोई जा सके तथा उत्पादन को बढ़ाया जा सके।

(iii) लघु सिंचाई पर बल :–

हरित क्रान्ति की सफलता के लिए केवल उन्नत खाद व बीज ही काफी नहीं थे। इसके लिए सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था आवश्यक थी जो केवल बड़े बांधों से ही पूरी नहीं की जा सकती थी। अतः इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नलकूप, छोटी नहरें, तालाब, कुएँ, वाटर हार्वेस्टिंग तथा ट्यूबवैल द्वारा सिंचाई पर जोर दिया गया।

(iv) रासायनिक खाद :–

कृषि उपज को बढ़ाने के लिए यूरिया, पोटाश जैसी रासायनिक उर्वरकों के उपयोग में तीव्र वृद्धि की गयी। जिससे फसलों के उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ाया जा सके।

(v) उन्नत बीज :–

अधिक उपज एवं कृषि गुणवता को बढ़ावा देने के लिए उन्नत किस्म के बीजों के प्रयोग को बढ़ावा दिया गया।

(vi) कृषि यन्त्रीकरण को बढ़ावा :–

हरित क्रान्ति में कृषि विकास हेतु नई तकनीकी के कृषि उपकरणों के प्रयोग को बढ़ावा दिया गया जिससे फसल बुवाई से लेकर कटाई तक के सभी कार्य कम समय में कुशलता पूर्वक किए जा सके।

(vii) पौध संरक्षण कार्यक्रम :–

इसके अन्तर्गत भूमि तथा फसलों पर दवा छिड़कने का कार्य प्रारम्भ किया गया। जिन वर्षों में टिड्डी दल आते है, उन वर्षों में टिड्डियों को नष्ट करने के अभियान चलाकर उन्हें भूमि पर या आकाश में ही नष्ट कर दिया गया जिससे फसलों को क्षति पहुँचाने से बचाया जा सके तथा उत्पादकता को बढ़ाया जा सके।

(viii) कृषि शिक्षा तथा शोध :–

कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कृषि शिक्षा का विस्तार तथा शोध कार्यक्रम चालू किए गए।

(ix) भू–संरक्षण कार्यक्रम :–

भूसंरक्षण कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया गया तथा कृषि योग्य भूमि के क्षरण को रोकने तथा बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने हेतु शोध कार्यक्रम की व्यवस्था की गई।

(x) कृषि विकास हेतु विभिन्न संस्थाओं की स्थापना :–

कृषि विकास योजनाओं के कुशलतापूर्वक संचालन हेतु अनेक संस्थाओं की स्थापना की गयी। जैसे– राष्ट्रीय बीज निगम, उर्वरक निगम, नाबार्ड आदि।

(xi) कृषि मूल्य आयोग :–

कृषकों को उचित मूल्य की गारंटी देने के लिए कृषि मूल्य आयोग की स्थापना की गई।

(xii) फसलों का बीमा :–

प्राकृतिक प्रकोपो से सुरक्षा हेतु कृषि फसलों के बीमा का प्रावधान भी किया गया।

हरित क्रान्ति का महत्व :–

कृषि के क्षेत्र में आई इस अभूतपूर्व क्रान्ति ने इस क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण प्रभाव डाले। इस क्रान्ति का महत्व निम्न तथ्यों से समझा जा सकता है:–

(i) फसलों के कुल उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि :–

हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप फसलों के उत्पादन तथा उत्पादकता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई जिससे देश में खाद्यान्नों में आत्म निर्भरता की स्थिति बनी।

(ii) खेतिहर मजदूरों के लिए रोजगार :–

हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप खेतिहर मजदूरों की स्थिति में सुधार हुआ। कृषि क्षेत्र में विस्तार तथा उत्पादन में वृद्धि से इनके रोजगार में भी वृद्धि हुई। बहुफसल तथा व्यापारिक फसलों के उत्पादन में श्रमिकों की अधिक आवश्यकता को भूमिहीन श्रमिकों ने पूरा किया, जिससे इनकी आर्थिक दशा में सुधार हुआ।

(iii) ग्रामीण निर्धनता में कमी :–

हरित क्रान्ति के कारण ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों को रोजगार मिलने तथा बहु–फसली कार्यक्रमों से किसानों की आय में वृद्धि से उनकी निर्धनता को कम किया।

(iv) यन्त्रीकरण :–

हरित क्रान्ति से यन्त्रीकरण को बढ़ावा मिला जिससे परम्परागत औजारों की जगह अब आधुनिक उपकरण प्रयोग में लिए जाने लगे।

(v) उन्नत किस्मों का उत्पादन :–

हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप उन्नत बीज, कीटनाशक तथा रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उन्नत किस्म की फसलों का उत्पादन बढ़ा।

(vi) व्यावसायिक दृष्टिकोण :–

कृषकों में परम्परावादी दृष्टिकोण के स्थान पर व्यावसायिक दृष्टिकोण की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला।

(vii) आधुनिकीकरण :–

कृषि के आधुनिकीकरण को बढ़ावा मिला, जिससे किसानों की दशा में सुधार हुआ।

(viii) सुविधाएँ :–

कृषको को उचित मूल्य, भण्डारण, साख आदि सुविधाओं का लाभ मिलने से उनकी दशा में सुधार हुआ।

हरित क्रान्ति की सीमाएं:–

हरित क्रान्ति कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण क्रान्ति रही किन्तु इसकी कुछ कमियां तथा सीमाएं भी सामने आई जो निम्न प्रकार से है:–

(i) चुनिन्दा फसलों तक सीमित :–

हरित क्रान्ति का प्रभाव विशेषकर गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा तथा मक्का के उत्पादन पर ही अधिक पड़ा। इसकी मुख्य सफलता तो गेहूँ के क्षेत्र में प्राप्त हुई। इसलिए इसे गेहूँ की क्रान्ति भी कहा जा सकता है। इन फसलों के अलावा अन्य फसलों पर इसका प्रभाव काफी कम रहा।

(ii) सीमित क्षेत्रों पर ही प्रभावी :–

हरित क्रान्ति का प्रभाव सिंचित क्षेत्रों में ही अधिक देखने को मिला। कृषि कार्यों में पिछड़े तथा असिंचित क्षेत्रों में यह क्रान्ति सफल सिद्ध नहीं हो सकी। यही कारण है कि पंजाब तथा हरियाणा जैसे सिंचित राज्यों में इसका सर्वश्रेष्ठ प्रभाव देखने को मिला।

(iii) यंत्रीकरण के दुष्परिणाम :–

हरित क्रान्ति के प्रारम्भ में खेतीहर श्रमिकों के रोजगार में बढ़ोतरी हुई किन्तु धीरे–धीरे यंत्रीकरण को बढ़ावा देने के कारण श्रमिकों का कार्य यंत्रों द्वारा किया जाने लगा जिससे, इनमें बेरोजगारी बढ़ी।

(iv) आय की असमानता में वृद्धि :–

हरित क्रान्ति का लाभ धनी तथा सम्पन्न कृषकों को ही अधिक मिला क्योंकि कृषि की नयी विधियों को अपनाने के लिए धन की आवश्यकता थी जो छोटे एवं गरीब किसानों के लिए सम्भव नहीं था। इस कारण धनी कृषकों ने इसका लाभ उठाकर अधिक सम्पन्नता हासिल की। दूसरी ओर विभिन्न प्रदेशों के बीच भी आय की असमानता बढ़ी, क्योंकि जिन प्रदेशों में हरित क्रान्ति सफल रही है, वहां के किसान सम्पन्न हुए तथा शेष राज्यों के किसानों की दशा में कोई सुधार नहीं हुआ।

(v) उर्वरकों के प्रयोग का दुष्परिणाम :–

हरित क्रान्ति में रसायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के प्रयोग पर अधिक बल दिया। रसायनिक उर्वरको एवं कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग ने भूमि को अनुपजाऊ बना दिया, इसके साथ भूजल, पर्यावरण तथा जीवों को हानि पहुंची।

(vi) भू–जल स्तर में कमी :–

हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप नलकूपों, ट्यूब वैलों के माध्यम से भूजल का अत्यधिक दोहन किया जाने लगा जिससे भूजल स्तर में गिरावट आई।

(vii) पूंजीवादी खेती को बढ़ावा :–

उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कृषि औजार आदि सभी बहुत खर्चीले थे जिसके कारण खेती में पूंजीवादिता को बढ़ावा मिला।

(viii) संस्थागत परिवर्तनों की उपेक्षा :–

इस क्रान्ति में केवल तकनीकी परिवर्तनों पर जोर दिया गया तथा भूमि सुधारों को अनदेखा कर दिया गया।

इस प्रकार हरित क्रान्ति ने कृषि क्षेत्र के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया तथा तात्कालिक खाद्यान्न संकट को दूर कर देश को न केवल खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया बल्कि कृषिगत वस्तुओं का निर्यात भी किया जाने लगा।

श्वेत क्रांति

पशु धन उत्पादन और कृषि परस्पर सम्बद्ध है और ये एक–दूसरे पर निर्भर है और दोनों समग्र रूप से खाद्य सुरक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण है। विश्व में सर्वाधिक पशु भारत में पाये जाते हैं और विश्व में सर्वाधिक दूध उत्पादन भी भारत में ही होता है किन्तु भारत में पशु नस्ल दयनीय स्थिति में है। इस कारण दूध उत्पादकता काफी कम है तथा लागत ऊँची आती है। इसमें सुधार के लिए सरकार द्वारा श्वेत क्रान्ति के रूप में एक सघन कार्यक्रम चालू किया गया।

वर्ष 1964–65 में भारतीय कृषकों के लिए सघन पशु विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसके अन्तर्गत देश में दूध का उत्पादन बढ़ाने के लिए पशुपालकों को पशुपालन के उन्नत एवं विकसित तरीकों का प्रशिक्षण प्रदान किया गया। इसमें पशुपालकों को उन्नत किस्म की गाय तथा भैंसे प्रदान की गई तथा कृत्रिम गर्भाधान के तरीके विकसित किए गए।

दूध के उत्पादन में तीव्र वृद्धि को ही श्वेत क्रान्ति कहा जाता है। सन् 1970 में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड ने गुजरात के आणद गाँव से श्वेत क्रान्ति की शुरूआत की, जिसे ऑपरेशन फ्लड का नाम दिया गया। इसके जन्मदाता तथा सूत्रधार डॉ. वर्गीज कुरियन है। ऑपरेशन फ्लड विश्व का सबसे बड़ा समन्वित डेयरी विकास कार्यक्रम है।

श्वेत क्रान्ति का महत्व

(I) दूध उत्पादन में वृद्धि :–

श्वेत क्रान्ति के परिणामस्वरूप दूध के उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। आज भारत विश्व का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश है तथा भारत में दूध का कुल वार्षिक उत्पादन सन् 2013–14 में 137.69 मीट्रिक टन है। प्रतिवर्ष दूध उत्पादन में वृद्धि होती जा रही है। 2013–14 में प्रति व्यक्ति 307 ग्राम प्रतिदिन दूध की उपलब्धता प्राप्त हुई।

(ii) कृषकों को आय :–

डेयरी व्यवसाय लाखों ग्रामीण परिवारों की आय का एक महत्वपूर्ण द्वितीय स्रोत बन गया है और लाखों लोगों विशेष रूप से महिला तथा सीमान्त किसानों के लिए आय के अवसर जुटाने में इसकी मुख्य भूमिका रही है।

(iii) ग्रामीण बेरोजगारों के लिए रोजगार :–

ग्रामीण व भूमिहीन लोगों तथा खेतीहर मजदूरों को पशुपालन के रूप में एक स्थायी तथा स्वनियोजित रोजगार उपलब्ध हुआ। डेयरी विकास से इन्हें इस क्षेत्र में व्यापक रोजगार मिला। देश में अधिकांश दूध उत्पादन सीमान्त तथा भूमिहीन मजदूरों द्वारा ही किया जाता है। इस कार्य में देश के 90 लाख किसान परिवार लगे हुए हैं।

(iv) सन्तुलित ग्रामीण विकास को बढ़ावा :–

डेयरी विकास के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में भी आधारभूत संरचना (सड़क, परिवहन, संचार, बैंकिंग) का विकास हुआ क्योंकि श्वेत क्रान्ति के सफल क्रियान्वन के लिए इनका विकास आवश्यक था।

(v) शहरी क्षेत्रों को दूध की उपलब्धता :–

ऑपरेशन फ्लड के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों से अतिरिक्त उत्पादित दूध शहरी क्षेत्रों में पहुंचाया गया जिससे शहरी क्षेत्र के लोगों को न केवल दूध बल्कि दही, छाछ, घी, पनीर तथा मक्खन जैसे दूध निर्मित पदार्थ सरलता से उपलब्ध होने लगे।

(vi) पशु नस्ल में सुधार :–

ऑपरेशन फ्लड के परिणामस्वरूप पशुओं की नस्ल सुधार तथा उनकी बीमारियों की रोकथाम के समुचित प्रबन्धन से भारत में पशु नस्ल में भी सुधार हुआ है।

इस प्रकार श्वेत क्रान्ति ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था की काया ही पलट दी। हरित क्रान्ति ने किसानों के कृषि सुधार कर उनके मुख्य व्यवसाय की सुरक्षा की तो श्वेत क्रान्ति ने पशुपालन व दूध उत्पादन में सुधारात्मक सहयोग कर उन्हें एक अतिरिक्त रोजगार एवं आय का आधार प्रदान किया।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख अंग, नींव एवं रीढ़ है।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्वपूर्ण योगदान निम्न क्षेत्रों में रहा है:–
   (I) राष्ट्रीय आय
   (ii) रोजगार उपलब्ध करवाना
   (iii) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में योगदान
   (iv) औद्योगिक विकास में योगदान
   (v) खाद्यान्न एवं चारा आपूर्ति में योगदान
   (vi) निर्धनता उन्मूलन में योगदान
   (vii) राजस्व में योगदान
   (viii) अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के विकास में योगदान
   (ix) पशुधन विकास
3. कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत नवीन प्रवृत्तियां :–
   (I) खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि
   (ii) प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उत्पादन क्षेत्र में वृद्धि
   (iii) भूमि सुधार कार्यक्रम का क्रियान्वयन
   (iv) सिंचाई को बढ़ावा
   (v) कृषि जोतों का पुनर्गठन
   (vi) खाद, उर्वरक कीटनाशकों का प्रयोग
   (vii) उन्नत बीजों का प्रयोग
   (viii) कृषि यन्त्रीकरण को बढ़ावा
   (ix) कृषि उपजों का न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारण
   (x) कृषि साख को बढ़ावा
   (xi) किसान क्रेडिट कार्ड योजना का क्रियान्वन
   (xii) कृषि बीमा कार्यक्रम को बढ़ावा
4. कृषि उत्पादकता से तात्पर्य है एक इकाई से प्राप्त होने वाले उत्पादन की मात्रा जिसे प्रति हैक्टेयर उत्पादन के रूप में प्रकट किया जाता है।
5. भारत में अनेक विकास कार्यक्रमों के बाद भी आज कृषि क्षेत्र में उत्पादकता काफी कम बनी हुई है।
6. कृषि क्षेत्र में कम उत्पादकता के कारण है:–
   (i) प्राकृतिक (ii) संस्थागत (iii) तकनीकी व अन्य
7. भारत में सिंचाई के तीन प्रमुख स्रोत है:– नहरें, कुएं व तालाब
8. भारत में कृषि क्षेत्र में निम्न समस्याएं बनी हुई हैं:–
   (i) प्राकृतिक विपदाएं
   (ii) जोतों का आकार छोटा होना
   (iii) कृषि वित्त का अभाव
   (iv) कृषि आगतों का अभाव
   (v) सिंचाई सुविधाओं का अभाव
   (vi) भूमि की शक्ति का ह्रास
   (vii) कृषि विपणन की समस्या
   (viii) किसानों की रूढिवादिता
   (ix) किसानों की निरक्षरता
   (x) भू–सुधार कार्यक्रमों का उचित क्रियान्वन नहीं होना
   (xi) उचित मूल्य का अभाव।
9. कृषि क्षेत्र की समस्याओं के सुधार हेतु निम्न उपायों को अपनाना चाहिए:–
   (I) भू–सुधार कार्यक्रमों को प्रभावपूर्ण ढ़ंग से लागू किया जाए।
   (ii) कृषकों को अनुदानित कृषि आगते उपलब्ध करवायी जावे।
   (iii) सूखी खेती की विधियों का प्रसार किया जावे।
   (iv) कृषि भण्डार गृहों की स्थापना की जाये।
   (v) जैविक कृषि को बढ़ावा दिया जाये।
   (vi) ग्रामीण कुटीर एवं कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया जाये।
   (vii) कृषि के साथ रोजगार के वैकल्पिक स्रोतों को बढ़ाया जाये।
   (viii) शिक्षा का प्रसार किया जाए।
10. हरित क्रान्ति से तात्पर्य है कि कम समय में कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण वृद्धि होना तथा यह वृद्धि लम्बे समय तक बनाए रखना।

11. हरित क्रान्ति का प्रारम्भ सन् 1966–67 के बीच हुआ।

12. हरित क्रान्ति के प्रमुख तत्व निम्न हैः–

(I) अधिक उपज देने वाली फसलों का कार्यक्रम

(ii) बहु–फसल कार्यक्रम

(iii) लघु सिंचाई पर बल

(iv) रासायनिक खाद के प्रयोग पर बल

(v) उन्नत बीजों का प्रयोग

(vi) कृषि में यन्त्रीकरण को बढ़ावा

(vii) पौध संरक्षण कार्यक्रम

(viii) कृषि शिक्षा तथा शोध को बढ़ावा

(ix) भूसंरक्षण कार्यक्रम

(x) कृषि विकास हेतु विभिन्न संस्थाओं की स्थापना

(xi) मूल्य आयोग की स्थापना

(xii) फसल बीमा कार्यक्रम

13. हरित क्रान्ति का महत्वः–

(i) फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि हुई।

(ii) खेतीहर मजदूरों को रोजगार में वृद्धि हुई।

(iii) ग्रामीण निर्धनता में कमी आई।

(iv) कृषि में यन्त्रीकरण को बढ़ावा मिला।

(v) उन्नत किस्मों का उत्पादन बढ़ा।

(vi) कृषि में व्यावसायिक दृष्टिकोण का विकास हुआ।

(vii) कृषि में आधुनिकीरण को बढ़ावा मिला।

14. हरित क्रान्ति की सीमाएँः–

(i) चुनिन्दा फसलों तक ही सीमित।

(ii) सीमित क्षेत्रों तक ही प्रभावी।

(iii) यन्त्रीकरण के दुष्परिणाम

(iv) आय की असमानता में वृद्धि

(v) उर्वरकों के प्रयोग के दुष्परिणाम

(vi) भू–जल स्तर में कमी

(vii) पूंजीवादी खेती को बढ़ावा

(viii) संस्थागत परिवर्तनों की उपेक्षा

15. दूध उत्पादन में तीव्र वृद्धि श्वेत क्रान्ति के नाम से जानी जाती है।

16. श्वेत क्रान्ति के जन्मदाता डॉ. वर्गीज कुरियन है।

17. श्वेत क्रान्ति का महत्वः–

(i) दूध उत्पादन में वृद्धि

(ii) कृषकों की आय में वृद्धि

(iii) ग्रामीण बेरोजगारों के लिए रोजगार

(iv) सन्तुलित ग्रामीण विकास को बढ़ावा

(v) शहरी क्षेत्रों को दूध उपलब्धता

(vi) पशु नस्ल में सुधार

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :–

1. भारत में रोजगार का प्रमुख आधार हैः–

(क) कृषि (ख) उद्योग

(ग) सेवा क्षेत्र (घ) पशुपालन

2. अल्पकालीन ऋणों की अवधि कितनी होती है ?

(क) 15 महीने से कम (ख) 2 वर्ष से कम

(ग) 5 वर्ष से कम (घ) 10 वर्ष से कम

3. हरित क्रान्ति का सर्वाधिक लाभ किस राज्य को मिला ?

(क) गुजरात (ख) पंजाब

(ग) केरल (घ) जम्मू कश्मीर

4. श्वेत क्रान्ति का सम्बन्ध किस क्षेत्र में है ?

(क) मत्स्य पालन (ख) पशुपालन

(ग) बागवानी (घ) कोई नही

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. कृषि की सहायक क्रियाएं कौन–कौन सी है ?
2. जायद फसलें किसे कहते है ?
3. लघु सिंचाई परियोजना क्या है ?
4. कृषि जोत किसे कहते है ?
5. उर्वरकों में मुख्य रूप से किन उर्वरकों का प्रयोग होता है ?
6. कृषि साख के गैर संस्थागत स्रोत कौन–कौन से है ?
7. निर्यातों में कृषि उत्पादों का कितना हिस्सा हैं ?
8. हरित क्रान्ति किसे कहते है ?
9. अधिक उपज देने वाली फसल कार्यक्रम को किन फसलों पर लागू किया गया ?
10. भारत मश्वेत क्रान्ति के जन्मदाता कौन है ?

11. पायलट प्रोजेक्ट के रूप में किस कार्यक्रम को शुरू किया गया ?

12. सर्वाधिक पशुधन किस देश में पाया जाता है ?

13. विश्व का सबसे बड़ा डेयरी विकास कार्यक्रम कौनसा है ?

14. हरित क्रान्ति का मुख्य उद्देश्य क्या था ?

15.गहन कृषि जिला कार्यक्रम कितने जिलों में शुरू किया गया?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. कृषि यन्त्रीकरण किसे कहते हैं ?

2. किसान क्रेडिट कार्ड योजना क्या है ?

3. व्यापारिक फसलें किसे कहा जाता है ?

4.कृषि उत्पादकता में कमी के प्राकृतिक कारण कौन–कौन है?

5. जोतों का उपविभाजन एवं अपखण्डन से आप क्या समझते है?

6. समर्थन मूल्य किसे कहते हैं ?

7. भारतीय कृषि को मानसून का जुआ क्यों कहा जाता है ?

8. पशुधन विकास में कृषि का महत्व समझाइए।

9. एच.वाई.वी.पी. कार्यक्रम क्या है ?

10. लघु सिंचाई कार्यक्रम को समझाइये ?

11. पौध संरक्षण कार्यक्रम से आप क्या समझते हैं ?

12. श्वेत क्रान्ति के तीन लाभ बताइये ?

13. रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के दुष्परिणाम बताइये ?

14. भूजल स्तर में कमी के क्या कारण है ?

15. हरित क्रान्ति व श्वेत क्रान्ति में क्या अन्तर है ?

16. सघन पशु विकास कार्यक्रम को समझाइये ?

17. शहरों की दूध आवश्यकता को श्वेत क्रान्ति ने किस प्रकार पूरा किया ?

निबन्धात्मक प्रश्न :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व को समझाइयें ?

2. भारत की कृषि विकास की समस्याएँ व निराकरण के उपाय समझाइये ?

3. हरित क्रान्ति का अर्थ बताते हुए उसकी प्रमुख उपलब्धियों का वर्णन कीजिए ?

4. श्वेत क्रान्ति से आप क्या समझते है ? इससे विभिन्न वर्गों को क्या–क्या लाभ प्राप्त हुए ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर :–

(1) क (2) क (3) ख (4) ख